उपन्यास 'अनामदास का पोथा' का सामाजिक पक्ष

रूबी त्रिपाठी
सहायक प्राध्यापक (अतिथि संकाय)
हिन्दी विभाग,
आर्य कन्या डिग्री कालेज
(संघटक महाविद्यालय,इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के चार उपन्यासों में से अन्तिम उपन्यास अनामदास का पोथा है। इसे रैक्व आख्यान भी कहा जाता है। पंडितजी के उपन्यासों में से यह सबसे छोटा और सशक्त उपन्यास है जो एकांत समाधि से जीवन संग्राम की ओर मोड़ने वाला उपन्यास है।

अनामदास का पोथा उपन्यास का नाम क्यों दिया गया है? यह भी विचारणीय हो सकता है। जहां तक रैक्व आख्यान का प्रश्न है ऋषि रिक्व के पुत्र रैक्व को लेकर के उपन्यास का ताना–बाना बुना गया है। अतः रैक्व को लेकर इस उपन्यास को रैक्व उपन्यास कहना उचित ही प्रतीत होता है। जहां तक पोथे का प्रश्न है पण्डित जी तत्कालीन लेखन की बड़ी आलोचना करते हुए कहते हैं कि पुस्तक लिखना आज इतना सरल काम नहीं है कि आलोचक जब तक एक पुस्तक पढ़ता है तब तक लेखक की कई पुस्तकें बाजार में आ जाती हैं। मोटी–मोटी थिसिसों की चर्चा करते हुए कहा है कि पुस्तकें लिखना कितना आसान समझा गया है।

अनाम नाम के प्राणि से प्रेरणा मानकर, चूंकि उन्होंने अपना नाम नहीं बताया, अतः उसका नाम अनाम रख दिया; क्योंकि नाम में क्या है? अतः पण्डित जी का पाण्डित्य 'अनाम' के रूप में उभर कर आया और अपने पाण्डित्य को रूप दे दिया पोथे के रूप में।

संक्षेप में उपन्यास का ताना–बाना कुछ इस प्रकार है– उद्‌गीथ के विलक्षण व्याख्याता ऋषि रिक्व के पुत्र, जिन्हें रैक्व नाम से जाना जाता है, के माता–पिता का देहावसान बचपन में ही हो गया। मातृ–पितृ हीन बालक रैक्व तपश्चर्या में लग गये व चिंतन–मनन में इतने खो गए कि उन्हें पता ही नहीं था कि दुनिया में और क्या होता है? अन्न कैसे उत्पन्न होता है? सामाजिक जीवन क्या चीज है? पुरुष और स्त्री का क्या भेद है? भोलेराम का मन केवल अंतिम तत्व के चिंतन में ही लगा रहने लगा। न जाने क्यों रैक्व 'वायु' को ही चरम या अंतिम सत्ता मानने लगे। जो ब्रह्माण्ड में वायु है वही पिण्ड मे ंप्राण। रैक्व ने निष्कर्ष निकाला कि वायु के बिना कुछ भी सम्भव नहीं है। इसका प्रमाण भी उन्हें मिल गया। वायु प्रताप से तूफान व वर्षा आई और नदी के जल ने उन्हें (चेतन सत्ता को) भी दूर फेंक दिया। वहीं पर राजा जानश्रुति की कन्या जाबाला से सम्पर्क और नहीं चिंतन धारा में प्रवेश। इसी क्रम में माँ भगवती ऋतम्भरा से मिलन, औषस्ति ऋषि से ज्ञानार्जन, जटिल मुनि, मामा, औदुम्बरायण आदि से दिशा निर्देश की प्राप्ति। दूसरी ओर राजा जानश्रुति द्वारा हंस जोड़े से रैक्व की

प्रशंसा सुनना, रैक्व को खोजना और फिर उसके पास ज्ञान प्राप्ति हेतु पहले सांसारिक वैभव की वस्तुएं अर्थात् धन–दौलत आदि भेजना, रैक्व द्वारा अस्वीकार और फिर राजा की कन्या के साथ गमन तथा रैक्व द्वारा कन्या का उपोद्ग्रहण। साथ ही राजा को परम तत्व के रूप में वायु का ज्ञान प्रदान करना।

यह है उपन्यास का सार–संक्षेप और उभरते हैं इस उपन्यास में रैक्व के अतिरिक्त ऋषि औषस्ति, आचार्य औदुम्बरायण, राजा जानश्रुति, आश्वलायन, जटिल मुनी आदि पुरुष पात्र एवं स्त्री पात्रों के रूप में उभरते हैं जाबाला, माँ ऋतम्भरा, ऋजुका और अरुन्धति आदि।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के आलोच्य उपन्यास को जहां कुछ लोग अंतिम सत्ता की खोज, प्रेरक तत्वदर्शन का ग्रंथ मानते हैं तो कुछ इसे कला की उजागरता के कारण कला का ग्रंथ तथा कुछ इसे आचार विज्ञान का एक पक्का शुद्ध शास्त्रीय पुस्तक के रूप में स्वीकारते हैं। एक अन्य पक्ष ने उक्त उपन्यास को निकृष्टम प्रेम कहानी माना है तो कुछ उसे मानते हैं वैदिक औपनिषदिक आख्यानों का पिटारा। उपन्यास में यथा–स्थान उपरोक्त सभी पक्षों को उभारा गया है। इससे उपन्यास एक पक्षीय न होकर वास्वत में सामाजिकता को बताने वाली एक खुली पुस्तक है।

द्विवेदी जी का उपन्यास प्रारम्भ से अंत तक तत्व चिंतन की धारा में बहता हुआ है। उपन्यास का आरम्भ ही तत्व–चिंतन से द्विवेदीजी करते हैं। ''रैक्व ने किसी पुराने ऋषि का मंत्र सुना था कि सृष्टि के आदि में केवल जल की ही सत्ता है। जल से ही सत्य का उदय हुआ, सत्य ही ब्रह्म हैं ब्रह्म से प्रजापति की उत्पत्ति हुई और प्रजापति से देवताओं की उत्पत्ति हुई। ये देवतागण केवल सत्य की ही उपासना करते हैं।'' बालक रैक्व ने कभी अपने पिता से सुना था कि ''सभी वस्तुएं एक ही तत्व से निकली हैं और उसी तत्व में विलीन हो जाती है।''[1]

पर वह यह मानने को तैयार नहीं था कि ''जल ही वह अंतिम सत्ता है।'' ज्योंही उपन्यास का आरंभ हुआ, तत्व की बात आई, आचार्य द्विवेदीजी का पाण्डित्य जगा और वे पहुंच गए वैदिक औपनिषदिक आख्यानों पर। राजा जानश्रुति की कन्या जाबाला भी जैसे रैक्व को उपदेश देने के लिए तैयार बैठी है –जब रैक्व जाबाला को कहता है सब कुछ वायु से उत्पन्न होता है, वायु में बिलीन हो जाता है। मेरे भीतर, तुम्हारे भीतर और समस्त ब्रह्माण्ड में वायु ही सब कुछ करा रहा है।[2] तब जाबाला इसका उत्तर औपनिषदिक ज्ञान के आधार पर देती है।

ऋषि कुमार रैक्व अपने प्रश्नों के साथ माँ ऋतम्भरा के पास पहुंचते हैं तो वह रैक्व को समझाती है कि बेटा इस शरीर में अन्न का बना अंश है, प्राण भी है, मन भी है, विज्ञान भी है, आत्मा भी है। इनमें सभी उत्तरोत्तर सत्य है। भृगु को उनके पिता वरुण ने जब परम तत्व की खोज के लिए कहा तो उन्होंने इसी प्रकार से खोज की थी जिसे ''भार्गवी विद्या'' कहा जाता है।

राजा जानश्रुति तत्व–चिंतन के चक्कर में राजकाज आदि से विरक्त हो जाते हैं। उनका केवल एक ही ध्येय रह जाता है चिन्तन, मनन, ज्ञान–चर्चा। फलतः राज्य की दशा बिगड़ जाती है और परिणामस्वरूप चारों तरफ दुःख ही दुःख व्याप्त हो जाता है। राजा का ध्यान इस ओर जब आचार्य औदुम्बरायण द्वारा आकर्षित किया जाता है तो हल्का सा झटका अवश्व लगता है, पर पुनः वे अपने स्वार्थ में ही चक्कर लगाते हैं।

जटिल मुनी एवं ''मामा'' की परदुःख कातरता विचारणीय है। मामा जिसका इस संसार में कोई नहीं है उस बच्चे का भी मामा है, बूढ़े का भी मामा। जिसका कोई न होते हुए भी सब कुछ है। माताजी से मामा कहते हैं – गांव तो कोई और था माताजी मेरा, अब इसी गांव में रहता हूं। मेरी बहिन इसी गांव में ब्याही थी। मां–बाप के मर जाने से अनाथ होकर बहिन के पास आ गया। अब तो वह भी नहीं रही मगर मैं गांव भर का मामा बनकर यहीं पर बस गया हूं।[3]

मां भगवती ऋतम्भरा रैक्व को जीने की इच्छा का परिचय कराती हैं। वे कहती हैं– मृत्यु सब को निगलने के लिए मुंह बाये खड़ी है और फिर भी लोग जीना चाहते हैं? सब मर सकता है, पर जीने की इच्छा नहीं मरती।[4]

एक जो विशेष बात मां ने कही वह वास्तव में विचारणीय है। जीने की इच्छा किसमें नहीं है? पर ऐसे कितने आदमी मिलेंगे जिनमें जीने की नहीं जिलाने की इच्छा होती है? मामा कुछ ऐसा ही पात्र है जिसमें जिलाने की इच्छा है। जिजीविषा है तो जीवन रहेगा, जीवन रहेगा तो अनन्त संभावनाएं रहेंगी। यही प्रकृति है। इसे सुनियोजित रूप से चलाने का प्रयास ही शुभ है। वही संस्कृति है। प्रकृति को सुनियोजित रूप से चलाने का नाम ही संस्कृति है।[5]

इससे सिद्ध होता है कि संसार चक्र का कारण ही जीने की इच्छा है। और जीने की इच्छा के कारण ही अनन्त संभावनाएं हैं।

अब रैक्व इस निष्कर्ष पर पहुंच जाते हैं कि तप की वास्तव में सच्ची कसौटी समाज ही है। रैक्व दीन दुखियों की सेवा करना ही परम ध्येय बना लिया। रैक्व कहते हैं कि जो दीनदुःखियों की सेवा नहीं कर सकता वह क्या परीक्षा करेगा। मैं अब थोड़ा रहस्य समझने लगा हूं, कोरा बाग, वितण्डा ज्ञान नहीं है।

राज्य के कर्मचारियों के बारे में स्पष्ट ढंग से उपन्यास में बताया गया है। शासक कर्मचारियों की आंख से देखता है। पर जब तक शासक जागरूक नहीं होता, कर्मचारी शिथिल हो जाते हैं। फलतः शासक को चिन्ता में न डालने की आड़ में वे अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं, निश्चिन्त हो जाते हैं।

उपन्यास में धर्म की भी बड़ी चर्चा हुई है। धर्म पाप–पुण्य आदि पर चर्चा करते हुए आचार–विचार पर चर्चा की गई है। ऋषि कुमार रैक्व जिसने स्त्री को कभी देखा ही नहीं, जिसके लिए विपत्तिग्रस्त व्यक्ति की सहायता ही धर्म है, जब जाबाला से सम्मुख पीठ पर बैठने का आग्रह करता है तो जाबाला कह उठती है कि तापस कुमार तुम्हारा यह प्रस्ताव पाप है। जब रैक्व मां से पूछता है कि तपस्या की कसौटी समाज है। इसका क्या अर्थ है? तो मां ऋतम्भरा कहती है कि ''मानलो बेटा, तू किसी जंगल में अकेला तप कर रहा है, तू सत्यवादी है। अब इस बात की परीक्षा कैसी होगी कि तू सचमुच सत्यवादी है? 10–20 आदमियों से सम्पर्क में आयेगा, कहीं तेरे स्वार्थ पर चोट पहुंचेगी, उस समय अपना मतलब साधने के लिए किसी बात को छिपाने का प्रयत्न नहीं करेगा तभी मालूम हो सकेगा कि तू सत्य पर दृढ़ है। अकेले–अकेले तो हर व्यक्ति सत्यवादी होने का दावा कर सकता है। दस आदमियों के सम्पर्क में आने से ही उसकी निष्ठा की परीक्षा होगी।

वास्तव में धर्म का सच्चा अर्थ पर–दुःख कातरता ही है। धर्म सम्प्रदायों में, जातियों में नहीं बैठता है, परम्पराओं में अटता नहीं है। धर्म व्यक्ति के आचरण से जुड़ा हुआ है और उसका उद्देश्य मानव मात्र का कल्याण करना है।

पाप और पुण्य को भी उपरोक्त प्रकाश से ही स्पष्ट करते हैं। जिस कार्य से किसी को शारीरिक और मानसिक कष्ट होता है वह पाप कर्म है। जिससे किसी का दुःख दूर हो, यह लोक या परलोक सुधर जाये तो वह पुण्य कार्य है। पाप और पुण्य का सार भी यही है। हमें सभी मानवीय गुणों की खोज समाज में करनी है। अतः पाप और पुण्य हमारे आचरणों पर ही निर्भर करते हैं।

रैक्व ऋषि के भोलेपन के उदाहरण हमारे लिए विशेष महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण है जाबाला और रैक्व के मध्य चले आ रहे रागात्मक संबंध। रैक्व ऋषि के पीठ पर खुजली चलती है। मां ऋतम्भरा के अनुसार वह कोई पाप नहीं ''अभिलाषा मात्र'' है। रैक्व के लिए जाबाला अर्थात शुभा गुरु है, सब कुछ है। जाबाला के मनस में भी रैक्व के प्रति अभिलाषा का भाव है। रैक्व के मानस में सदैव ही तप करते समय, ध्यान करते समय शुभा ही उभर आती है। जाबाला के सम्मुख है रैक्व। फलतः दोनों का उद्धार होता है। काम और प्रेम विवाह तथा उद्वाह में अन्तर स्पष्ट किया गया है। ऋषि औषस्ति कहते हैं कि पितृ ऋण से ही पुरुष और स्त्री पूर्णता प्राप्त करते हैं। संसार में सबसे बड़ा लक्ष्य प्रेम को प्राप्त करना है।

जहां तक ज्ञान यज्ञ का प्रश्न है ऐसा शास्त्रों में उल्लेख है कि राजा या कोई भी व्यक्ति ऋषि के पास ज्ञान–यज्ञ के लिए जाते थे और ज्ञानोपदेश की प्राप्ति के पश्चात् .ऋषियों को दक्षिणा आदि देते थे। जहां तक उपन्यास का प्रश्न है, ज्ञान–यज्ञ की दक्षिणा के रूप में राजा जानश्रुति ने तो ऋषि कुमार को अपनी कन्या को दक्षिणा स्वरूप प्रदान की।

अध्ययन केन्द्रों के सम्बन्ध में भी स्पष्ट रूप से यह उभारा गया है कि राजा आदि का पुराकाल में अध्ययन केन्द्रों पर प्रवेश कुलपति के आदेश के बिना सम्भव नहीं था और राजा को राजवेश का परित्याग करने पर ही कुलपति की अनुमति से प्रवेश मिल पाता था। आज के विश्वविद्यालय आदि अध्ययन केन्द्र इसके विपरीत प्रकार का चित्र हमारे सामने प्रस्तुत करते दिखायी देते हैं जहां शासकों का प्रवेश कुलपति की अनुमति पर निर्भर होने के बजाय कुलपति का प्रवेश शासकों की इच्छा पर निर्भर हो गया है। यही शायद कारण है कि आज शिक्षण संस्थाओं का स्तर गिरा है।

इस प्रकार स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि अनामदास का पोथा विरक्ति से संसक्ति की ओर ले जाने वाला, ज्ञान–योग से कर्मयोग की राह का प्रेरक, सशक्त उपन्यास है। ऐसी रचनाएं बहुत कम ही देखने को मिलती हैं, जिसमें समाज का हितचिन्तन ही सर्वोपरि है।

संदर्भ :

1. द्विवेदी ग्रन्थावली –2, पृष्ठ 316
2. द्विवेदी ग्रन्थावली –2, पृष्ठ 318–319
3. द्विवेदी ग्रन्थावली–2, पृष्ठ 375
4. द्विवेदी ग्रन्थावली–2, पृष्ठ 377
5. द्विवेदी ग्रन्थावली–2, पृष्ठ 377
6. अनामदास का पोथा का रेपर

****